SERBD- अंतरराष्ट्रीय हिंदी शोध पत्रिका नव अन्वेषण
ISSN (Online): XXXX-1234
Volume 02 Issue 03, July - Sept, 2022

रानी चंबयाली का लोकधर्म

लेखक
डा0 प्रिया शर्मा, सहायक प्रोफेसर,
हिंदी विभाग
केंद्रीय विश्वविद्यालय,
हिमाचल प्रदेश
शैक्षणिक खंड, धौलाधार परिसर–1
Email: ------

सारांश(Abstract):– हिमाचल प्रदेश के चंबा क्षेत्र का जो स्वप्न रानी चंबयाली ने देखा था, उस रामराज्य की धारणा, रानी के मानस की धारणा है। यह धारणा आदर्शात्मक एवं परिपूर्ण है। वर्तमान परिवेश में रानी की धारणा का रामराज्य स्थापित करना मनुष्य के वश में नहीं है। रानी के बलिदान से यह पता चलता है कि उस समय भाासन–व्यवस्था का लक्ष्य व्यक्तिगत स्वार्थ न होकर समग्र समाज का कल्याण करना था। जो जितना करेगा, उसे उतना अवश्य मिलेगा। प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्म के अनुसार ही वस्तुएं प्राप्त होंगी। रानी जैसी न्यायप्रिय और त्यागी के राज्य में कभी कोई कमी नहीं हो सकती। व्यक्ति के अस्तित्व के बिना समाज का अस्तित्व भी सर्वथा असंभव है। व्यक्ति को कर्तव्यबोध की शिक्षा समाज से ही मिलती है।

keywords : ----------

हिमाचल प्रदेश के चंबा क्षेत्र का जो स्वप्न रानी चंबयाली ने देखा था, उस रामराज्य की धारणा, रानी के मानस की धारणा है। यह धारणा आदर्शात्मक एवं परिपूर्ण है। वर्तमान परिवेश में रानी की धारणा का रामराज्य स्थापित करना मनुष्य के वश में नहीं है। रानी के बलिदान से यह पता चलता है कि उस समय भाासन–व्यवस्था का लक्ष्य व्यक्तिगत स्वार्थ न होकर समग्र समाज का कल्याण करना था। जो जितना करेगा, उसे उतना अवश्य मिलेगा। प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्म के अनुसार ही वस्तुएं प्राप्त होंगी। रानी जैसी न्यायप्रिय और त्यागी के राज्य में कभी कोई कमी नहीं हो सकती। व्यक्ति के अस्तित्व के बिना समाज का अस्तित्व भी सर्वथा असंभव है। व्यक्ति को कर्तव्यबोध की शिक्षा समाज से ही मिलती है। धर्मशास्त्रों में तो गुण–रहित स्वधर्म को परधर्म से श्रेष्ठ माना गया है।[i] व्यक्ति की आवश्यकताएं अनेक हैं। उसे भौतिक और मानसिक आव यकताओं के लिए दूसरों का आश्रय लेना पड़ता है। जब उसका व्यक्तिगत जीवन इकाई से हटकर दूसरों के बिना अस्तित्व में नहीं रह सकता, तो उसे समश्टि का आश्रय लेना पड़ता है। मनुष्य की भक्ति सीमित है, 'वह निस्सीम नहीं, उसे परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है।'[ii] 'धरति लोकान्, ध्रियते पुण्यात्माभिरिति' अर्थात् धर्म लोक को धारण करता है तथा लोक में पुण्यात्माओं अथवा सज्जनों द्वारा धारण किया जाता है। धर्म को 'कर्तव्य, कल्याणकारी कर्म, सुकृति, सदाचार, श्रेय'[iii] का पर्याय भी माना जाता है। धर्म उस आचरण को कहते हैं 'जिससे समाज की रक्षा और कल्याण हो, सुख भाांति की वृद्धि हो।'[iv] हिमाचली समाज मूलतः आशावादी रहा है। यहां जिस विचार अथवा सिद्धांत का संबंध लोक मंगल से जोड़ दिया गया है, उसे लोक–समाज ने अपने जीवन का अंग सा बना लिया है। ऐसे वि वासों एवं मान्यताओं से उनमें शिष्टता की प्रवृति के संचार के साथ–साथ, आत्मवि वास भी मिलता है। जन–सामान्य की सहज अनुकरण प्रवृति तथा सुविधान्वेशी बुद्धि शास्त्रीय विधि–विधानों के व्यूह में न उलझकर व्यावहारिक जीवन के सुविधापूर्ण मार्ग का स्वतः ही अनुसरण करने लगती है। जीवन की कुछ मूलभूत आवश्यकताएं, परिस्थितिजन्य सुविधाएं एवं समय सापेक्ष व्यावहारिक आचार–विचार कभी–कभी ऐसी मान्यताओं को जन्म देते हैं, जो समय के साथ नया रूप ग्रहण करती रहती है। इस प्रकार जन–सामान्य के व्यावहारिक अनुभव उन्हें अनायास ही स्थिरता और विश्वसनीयता प्रदान करते हैं।

रानी चंबयाली जिनका नाम 'सुनयना' के नाम से विख्यात है, चंबा क्षेत्र अर्थात् अपने राज्य की समस्त गतिविधियों की सजग–सचेत प्रहरी के समान रक्षा की है। समाज के सभी विधि–विधानों से नियंत्रित होकर, जब उन्होंने आत्मोत्सर्ग पर बल दिया है, तब उनका व्यश्टिगत व्यक्तित्व समश्टिगत हो जाता है। कोई भी व्यक्ति किसी मानव–समूह के उत्थान के लिए प्रेम, दया, दान, सहानुभूति, करूणा, सहयोग आदि भावनाएं रखता है, वह मानव समुदाय का 'आदरणीय मुखिया' की संज्ञा को प्राप्त करता है। समाज की पृश्ठभूमि पर ही सार्वभौम प्रेम एवं श्रद्धा की आधारशिला रखी जा सकती है। आत्मत्याग और प्रेम की चरमावस्था ही व्यक्ति को सकाम कर्म से निष्काम कर्म की ओर ले जाती है।[v] धर्मशास्त्रों में स्वधर्म को परधर्म से श्रेष्ठ माना गया है।[vi] हरबर्ट स्ट्रोप ने 'धर्म को व्यक्ति का संतुलन'[vii] कहा है। व्यक्ति के व्यक्तित्व की दृष्टि से धर्म ससीम होते हुए भी असीम है। धर्म है – 'ब्रह्म के सत्स्वरूप की व्यक्त प्रवृति, जिसकी असीमता का आभास अखिल विश्व में मिलता है।'[viii] धर्म को व्यक्ति–बुद्धि की ज्योतिर्मयी अवस्था का परिणाम भी कह सकते हैं – 'धर्म चरम सत्ता की प्रत्यक्ष समझ (बुद्धि) है, वह प्रका ोदभव की अवस्था की प्राप्ति है।'[ix] धर्म मानव को वास्तविक जीवन–दृश्टि प्रदान करता है। लोक संस्कृति का तात्पर्य उस संस्कृति से है जो परिवार, प्रेम, विवाह, भारीर सज्जा, सम्पत्ति और उसका अधिकार, प्रथाओं, धार्मिक उत्सवों, लोक विश्वासों, लोकमानस की अभिव्यक्तियों, जन्म–मरण के संस्कारों आदि के द्वारा अभिव्यक्त होती है। लोक संस्कृति के निर्माण में परिवार का स्थान सर्वोपरि है। लोक संस्कृति का परिवार वास्तव में इतना विस्तृत होता है कि उसके लोकगीतों में सास, ननद, देवरानी, जेठानी, देवर, जेठ आदि पारिवारिक सदस्यों के उल्लेख अकसर सुनने को मिलते हैं। लोक मानस की अभिव्यक्तियां अनेक रूपों में होती हैं। जैसे अभिनय, आंगिक क्रियाओं द्वारा, नृत्य और संगीत के माध्यम से। यदि साहित्य समाज का दर्पण है तो लोक साहित्य जन–जीवन का दर्पण है। जन साधारण की सोच जैसी होती है, ठीक वैसी ही सोच उनके लोकगीतों में आबद्ध है।

जन–संस्कृति का सरल स्वाभाविक एवं सजीव चित्रण ही लोक साहित्य की आत्मा है। जन–जीवन के बाहर मनुष्य का कोई भी कार्य व्यापार नहीं हो सकता। जन व्यक्तियों का समूह है जिसके बीच मनुष्य जीवन यापन करता है। लोक साहित्य सामान्य जन को सबसे जोड़ने का कार्य करता है। हमारी लोक संस्कृति भारतीय संस्कृति ही है। हिमाचल प्रदेश के जिला चंबा में विभिन्न जन–जातियों के लोग बसे हैं। भौगोलिक विशमताओं एवं ऐतिहासिक परिवर्तनों के जो भी कारण रहे हों, फिर भी इन जनजातियों ने अपनी सांस्कृतिक विरासत को सहेज कर रखा है। इन जनजातियों में गद्दी, पंगवाल, चुराही, भोट, गुज्जर आदि जनजातियां प्रमुख हैं।

व्यक्ति समाज की इकाई है। जीवन की अनेक सम–विशम परिस्थितियों में धर्म उसका मार्गदर्शन करता है। व्यक्ति की संस्कृति उसके आचार–विचार से झलकती है। उसका व्यक्तिगत आचरण सामूहिक रूप से समाज का आचरण बनकर, परंपरा द्वारा रूढ़ होकर संस्कृति बन जाता है। मनुष्य संस्कृति का निर्माता है और उसका सजग संवाहक भी है। मनुष्य के बिना संस्कृति के निर्माण की कल्पना अधूरी है, क्योंकि संस्कृति के निर्माण में मनुष्य की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। 'जीवन की गति संस्कृति की जन्मदात्री है।'[x] रचनाशीलता की प्रवृति होने के कारण मनुष्य प्रकृति के उपादानों की उपयोगिता को समझकर विज्ञान के सहारे भौतिक सामग्रियों का निर्माण करता आया है। जिस वस्तु का मनुश्य सृजन करता है, वह संस्कृति का हिस्सा हो जाता है। संस्कृति में समय–समय पर जो परिवर्तन एवं परिवर्धन होते हैं, वे स्मृति पर आधारित हैं। 'हमारे भारीर में एक प्रकार के कण होते हैं, जिनमें स्मृति रहती है, यही स्मृति संस्कृति कहलाती है।'[xi] देवभूमि चंबा की धरती देवी–देवताओं की पुण्य भूमि मानी जाती है। आज तक चंबा क्षेत्र ने अपनी बहुमूल्य प्राचीन संस्कृति को सहेज कर रखा है। वैशाख महीना अर्थात् 'बसोआ' महीने में चंबा नगर में एक विशेष मेले का आयोजन किया जाता है जिसे 'सूही का मेला' के नाम से जाना जाता है। यह मेला चंबा की रानी 'सुनयना' की याद में आयोजित किया जाता है। लोक कथन के अनुसार चंबा की रानी ने नगर में पानी लाने के लिए अपना बलिदान दिया था। ऐसी मान्यता है कि राजा ने नगर का निर्माण तो कर लिया परंतु पानी का अभाव था। नगरवासियों को पानी रावी नदी से ढोकर लाना पड़ता था। राजा ने स्रोथा नाला से कूल्ह खुदवाकर चंबा नगर में पानी पहुंचाने का प्रयत्न किया परंतु व्यर्थ रहा। कूल्ह में पानी नहीं चढ़ा। कहते हैं राजा को स्वप्न में जलदेवी दर्शन देती थी और राज–परिवार के किसी प्रियजन की बलि मांगती थी। राजा ने योग गुरु चरपटनाथ से इस स्वप्न के बारे में मंत्रणा की और योग गुरु से अपनी ही बलि देने की इच्छा व्यक्त की। रानी सुनयना ने इसका विरोध किया कि राजा के बिना राज्य सूना हो जाएगा। इस प्रकार रानी अपना बलिदान देने के लिए तैयार हो गईं। रानी सुनयना ने गांव बजोटा में जिंदा समाधि ली। कहते हैं रानी के समाधि लेते ही कूल्ह में पानी चढ़ आया। रानी सुनयना आत्म–बलिदान करके चंबा के इतिहास में अमर हो गईं।[xii] इस प्रकार आज भी प्रतिवर्ष चंबा की रानी सुनयना की याद में सूही का मेला 15 चैत्र से पहली वैसाख तक लगता है। चंबा के राजा साहिल वर्मा के पुत्र और राज्य के उत्तराधिकारी ने ताम्रपत्र पर अपनी माता का नाम नैना देवी लिखा है। यह मेला अधिकतर महिलाओं और लड़कियों के लिए सुप्रसिद्ध है। रानी सुनयना के बलिदान को याद करते हुए राजा साहिल वर्मन ने जिस स्थान से रानी सुनयना ने अंतिम क्षणों में चंबा भाहर को नमन किया था, वहीं पर उनके मंदिर का निर्माण किया। यह स्थान 'सूही के मढ़' नाम से जाना

जाता है। प्रतिवर्श तीन दिनों तक यहां सूही का मेला लगता है जिसमें बच्चे और महिलाएं अपनी उपस्थिति दर्ज करवाते हैं। रानी की प्रशंसा में लोकगीत गाए जाते हैं –

बसोआ ते आया माये पंजे सत्ते मैं सुहियां देखण जाणा हो
बसोआ ते आया माये नेड़े–भेड़े मेरा बापू बी सादे नी आया हो
बापू तेरा ते कुड़िए बिरध स्याणा अपू आयां अपू जायां हो
पिंदड़ी त पिदड़ी माए अपू खाए, पिंदड़ी रे पट्ठे मिंजो भेजे हो[xiii]

ये गीत इतने मार्मिक हैं कि दिल की गहराई तक पहुंच जाते हैं। स्थानीय बोली में इन गीतों को 'घुरई' कहते हैं। विवाहित स्त्रियां अपने मायके द्वारा बुलाए जाने पर स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करती हैं। जिन बहनों का भाई नहीं होता या बुलाने नहीं आता, उनकी मनोदशा बड़ी विचित्र होती है। पुराने लोग चंबा की लड़की का विवाह चंबा में ही करते थे, रावी नदी के पार रिश्ता नहीं करते थे। अब सोच में परिवर्तन अवश्य आया है। यहां की लोक वार्ताओं में भाई अपने कर्तव्य का निर्वाह करता हुआ सुझाव देता है कि लड़की को रावी नदी पार नहीं करवानी है। यहां के सैकड़ों लोकगीत, लोक वार्ताएं एवं गाथाएं बहुत समृद्ध हैं। चंबा की रानी में प्रजापालन के स्वाभाविक गुण विद्यमान हैं। उन्होंने प्रजा के कल्याण और समृद्धि के लिए स्वयं का बलिदान दिया है। ऐसी रानी बड़े भाग्य से नसीब होती है। स्वयं तुलसी के भाव्दों में –

मली भानु किसान सम, नीति निपुन नरपाल।
प्रजा भाग बस होहिंगे, कबहुँ कबहुँ कलि काल।।[xiv]

रानी सुनयना के पास भास्त्र संबंधी बाह्य सामग्री के अतिरिक्त आंतरिक गुणों का भंडार है। ऐसी रानी के प्रति सैनिकों का और प्रजा का सहज–आदर प्रकट हो जाता है। इसी आदर्श को प्रकट करते हुए इस घुरेई की पंक्तियां हृदय को छू लेती हैं –

'गुड़क चमक भाऊआ मेघा हो... हो
रानी चंबयाली रे देसा हो हो'[xv]

उपरोक्त पंक्तियों में मेघों से प्रार्थना की गई है कि रानी चंबयाली के देश में गरजो, चमको और बरसो। रानी के बलिदान को देखकर जनता की वेदना से जैसे विरह रूपी काली बदली उठी और आंखों से मेघ बनकर बरस पड़ी। रानी के वियोग में आज भी यह गीत गाया जाता है –

'सुकरात कुड़ियो–चिड़ियो, सुकरात राजे दे बेहड़े हो
सुकरात कुड़ियो–चिड़ियो, सुकरात नौणे पणिहारे हो
सुकरात कुड़ियो–चिड़ियो, सुकरात लछमी नारायणा हो'[xvi]

बसो (वैशाखी) का त्योहार गदयार प्रदेश का प्रसिद्ध त्योहार है, उनका जीवन–स्पंदन है। 'गद्दी' चंबा के भरमौर क्षेत्र के निवासी हैं। इनकी बस्ती को 'गद्देरण' कहा जाता है, जिसका अर्थ है 'गद्दियों का घर'। अब यह जाति अपने मूल स्थान को छोड़कर मंडी, बिलासपुर, कांगड़ा आदि स्थानों में जाकर बसी हुई है। बहुत से इतिहासकार गद्दी जनजाति को मुस्लिम आक्रमणों के कारण पहाड़ी की ओर भागकर आने वाले खत्री जाति के लोग मानते हैं, परंतु यह मत सत्य प्रतीत नहीं होता। संभव है कि मैदानों से खत्री जाति के लोग आकर गद्दी जाति का अंग बन गए हों, परंतु वास्तविक गद्दी लोग अति प्राचीन और हिमाचल के मूल निवासियों में से हैं। यह जनजाति घुमक्कड़ प्रवृति की है। इनका प्रमुख व्यवसाय पशुपालन है जिनमें भेड़ों की बहुलता होती है। ऊनी चादरें, पट्टू, पट्टियां आदि बुनने का कार्य इनका पेशा है। चोला, डोरा, साफा, नुआली टोपी, लुआंचड़ी, चादर आदि इनकी सादी वेशभूशा है।[xvii]

चंबा क्षेत्र के जन–समुदाय में रानी चंबयाली की याद में 'बसोआ' या 'बसो' का त्यौहार मनाने का उत्साह गज़ब का होता है। यह जीवन की गतिविधियों का संचार केंद्र है। त्यौहार से 15 दिन पहले ही उत्साह की लहर चारों ओर दिखाई देती है। लड़कियां समूह में एकत्रित होकर रात को 'घुरही' लोकगीतों का गायन करती हैं। संयोग और वियोग भरे गीतों से वातावरण सजीव हो जाता है। लोकगीतों का दौर 'पिंदड़ी' के दर्द भरे गाने से आरंभ होता है। 'पिंदड़ी' का 'बसो' के साथ भावनात्मक संबंध है। पिंदड़ी का नाम लेते ही बसोआ याद आता है। 'पिंदड़ी' कोदरे के आटे से बनी गोल पिन्नियां हैं जिनको गुड़ के पानी अर्थात् गुड़ाणी के साथ सेवन करते हैं। पिंदड़ी को पितरों के निमित भी चढ़ाया जाता है, बाद में अपने मित्रों–रिश्तेदारों में बांटा जाता है। दुखी बहन की दुःखद गाथा कुछ इस प्रकार है –

बसन्दु ता फुल्ले आए घामी–घूमे
रित आइया सुंघड़ौणी हो
अम्मा ता मेरिए कुण तुहार आया हो.... ।[xviii]

यहां मायके के मोह का दर्पण है और ससुराल में मिलने वाली यातनाओं का दिग्द र्शन है। रानी चंबयाली जैसी स्त्री विधाता की सर्वोत्तम कृति है। यहां समाज की संरचना, संगठन और उसके पूरे ढांचे का आधार रानी है। 'बसोआ' त्यौहार पर 'घुरेई' लोकगीतों में रानी चंबयाली को याद करते हुए राम, लक्ष्मण, सीता के प्रसंग इतने मार्मिक हैं कि उनको सुनने के बाद मनुश्य की स्थिति करूणामय हो जाती है –

राम ते लक्षमण चौपड खेले सिया राणी कढदी कसीदा
इक बाजी बाहिया दूजी बाहणा लाया पाणी केरी लगदी प्यास हो..
कुण होला सुणंदा कुण होला गुणंदा कुण प्याला ठंडा पाणी हो
सिया होली सुणंदी सिया होली गुणंदी सिया प्याली ठंडा पाणी हो[xix]

स्पश्ट है कि पानी तो सीता ही पिलाएगी। राम लक्षमण चौपड़ खेल रहे हैं। कोई कहता है कि सीता धरती में डूब गई है। राम इसकी अनदेखी करते हैं और कोई अन्य सतवंती नार लाने का बहाना ढूंढते हैं। साथ ही संपर्क स्थापित करते हैं कि सीता कहां तक डूबी है। वह धीरे–धीरे डूबती जा रही है। पहले घुटने तक डूबती है, फिर ढाक तक फिर गले तक डूबती है। राम इस पर भी विचलित नहीं होते। सीता की अग्नि परीक्षा होने पर भी समाज संतुष्ट नहीं हुआ। अब सीता धरती माता की गोद मांगती है। धरती फट जाती है और सीता माता को अपनी गोद में स्थान देती है –

फिरी पिच्छे हेरे बो रामा सिया डोबे जो गई हो,
डुबदी जो डुबणा दिआ सतवंती नार करला हो
कैंह तांईं डुब्बी सीता कैंह तांईं रैही हो
गोडे तांईं डुबिआ सीता होर सारी रैहिआ हो
फिरी पिच्छे हेरे रामा सिया डोबे जो गई हो...
डुबदी जो डुबणा देआ सतवंती नार करला हो
कैंह तांईं डुब्बी सीता कैंह तांईं रैहिआ हो
ढाका तांईं डुब्बी सीता होर सारी रैहिआ हो
डुबदी जो डुबणा देआ सतवंती नार करला हो
कैंह तांईं डुब्बी सीता कैंह तांईं रैहिआ हो
गला तांईं डुब्बी सीता होर सारी रैहिआ हो...[xx]

उपरोक्त लोकगीत 'घुरेही' से स्पश्ट होता है कि रानी चंबयाली और सीता दोनों ने अपने समाज के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया। सीता को तुलसी ने ब्रह्म की आदि भाक्ति माना है। यह संसार की उत्पत्ति–स्थिति–संहारिका भाक्ति से संपन्न है।[xxi] वह जगत जननी है। सीता को तुलसी ने राम की प्रेरणा भक्ति माना है। रामचरितमानस में तुलसी की समाज–व्यवस्था में नारी का गौरवपूर्ण स्थान है। वह गृहलक्ष्मी है, पवित्र है और गरिमामय है।[xxii] सीता का आदर्श नारी रूप समाज में अनुकरणीय है –

'सुनु सीता तब नाम सुमिरि नारि पतिव्रत करहिं।
तेहि प्रानप्रिय राम कहिउं कथा संसार हित।'[xxiii]

इस प्रकार सीता और रानी चंबयाली के अपने समाज के प्रति प्रेम की पराकाश्ठा का वर्णन करना आसान कार्य नहीं है। दोनों में अपनी प्रजा के प्रति सर्वात्म समर्पण की पूर्ण अभिव्यक्ति है। रानी चंबयाली ने अपने लोकधर्म का पूरा–पूरा पालन किया है। वह प्रजापालक हैं और सद्गुण सम्पन्न हैं। परिवार का भवन प्रेम रूपी सुदृढ़ स्तम्भ पर टिका होता है। यही कारण है कि पतिव्रता रानी चंबयाली ने अपना बलिदान देकर अपने पति और वंश की रक्षा की है। वह परोपकारी हैं, करूणामयी हैं। वास्तव में लोक साहित्य किसी भी समाज की भाषा और भौगोलिक विकास को जानने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। चंबा का लोक साहित्य रानी चंबयाली के समाज का आईना है। आधुनिक समाज और सभ्यता के समर्थक युवा पीढ़ी को अपनी मूल जड़ें खोजनी हों, तो उसे चंबा के लोक साहित्य की सम्राज्ञी रानी चंबयाली अर्थात् सुनयना को अवश्य पढ़ना चाहिए। यह साहित्य उस निर्मल दर्पण के समान है जिसमें जनता–जनार्दन का अखिल तथा विराट रूप और रानी के उत्सर्ग की विराट छवि दिखाई देती है। इसमें जनता के सुख–दुःख एवं संवेदनाओं, भावनाओं की अभिव्यक्ति है जो 'घुरई' गीतों में स्पष्ट झलकती है। माता सूही चंबा की कुल देवी हैं। राजा साहिल वर्मन द्वारा रानी की स्मृति में नगर के ऊपर बहती कूल्ह के किनारे बनाई समाधि तथा प्रतिमा माता सूही के साक्षात विराजमान होने का प्रमाण है। लोककथन के अनुसार छठी भाताब्दी में रानी ने प्रजा की प्यास बुझाने के लिए अपने प्राणों की बलि दी थी। उस समय स्थिति यह थी कि अगर पुत्र की बलि देते हैं तो वंश समाप्त हो जाएगा। बड़ी दुविधा की स्थिति है। मां तो मां होती है। अपने पुत्र और प्रजा के हित के लिए कुछ भी कर सकती है और रानी ने किया। सूही के मेले के आखिरी दिन रानी की पालकी मंदिर से आदर सहित नीचे लाई जाती है। ऐसे सुअवसर पर चंबा भाहर की जनता पालकी के साथ होती है और हवाओं में गूंजते लोकगीत, घुरेई गीत सुनकर दिल भर आता है –

'गुड़क चमक भाउआ मेघा हो, बरेह चम्बयाली रे देसा हो
किहां गुड़कां ते किहां चमकां भैणे, अंबर भरोरा घणे तारे हो'[xxiv]

संबंधों की पवित्रता तथा रक्षा का निर्वाह करना यहां के लोक जीवन की विशेषता है। लोग त्यौहारों के आने का बेसब्री से इंतजार करते हैं। 'जातर' में गद्दी–गद्दन नाटी करते हैं –

'साहो जातरा लगोरी बसाखी रे पन्दरे–सोल्हे'[xxv]

- इस वर्श करोना महामारी के कारण इस त्यौहार को केवल विधि पूरा करने के अनुसार ही मनाया गया है, खुलकर नहीं। पत्रकारों ने ऑनलाइन सूही के मेले के आयोजन को अवश्य दिखाया है, ताकि परंपरा का निर्वाह पूरा हो सके। मां चंबयाली की जिंदा समाधि उनके धर्म और आचरण को व्यावहारिक रूप देती है, उसमें लोकसमाज का स्थायित्व है, गतिशीलता है। चंबा क्षेत्र के लोग रानी चंबयाली के युगों–युगों तक आभारी रहेंगे। वर्तमान परिवेश में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने आर्थिक लाभ दिए हैं, उसके साथ–साथ सांस्कृतिक संकट भी पैदा किया है। आज पुरानी मान्यताओं को त्यागकर नए मूल्यों को ग्रहण करने का प्रयास जारी है। भले ही वर्तमान युग बुद्धिवादी युग है परंतु कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध कराने के लिए लोकजीवन की जड़ों से जुड़ना अति आव यक है। मेरा बचपन गद्दी, गुज्जर, चुराही और चंबयाली समाज में व्यतीत हुआ है। ढोलरू, मुसाधा, ऐंचली, घुरेई, सुकरात, गाली, छिंज–जातर, हरणात्तर, स्वांग को मैंने करीब से देखा–सुना और भाग लिया है। अगर हम सब सभ्य समाज चाहते हैं तो ख़तरे में पड़ रही लोक संस्कृति को बचाना होगा। लोक संस्कृति में हमारी जड़ें हैं और जड़ों को पानी नहीं देंगे तो सूख जाएंगी।।

----------00--------

संदर्भ ग्रंथ सूची

[i] श्रीमद्भगवद्गीता, 8, 47
[ii] साहित्य और साहित्यकार, डॉ0 देवराज, पृ0 33
[iii] संक्षिप्त हिंदी भाब्दसागर, सं0 रामचंद्र वर्मा, पृ0 500
[iv] भार्गव आद र्ा हिंदी भाब्दको ा, सं0 आर0 सी0 पाठक, पृ0 261
[v] श्रीमद्भगवद्गीता, 13, 28
[vi] वही, 8, 48
[vii] फोर रिलीजन ऑफ एि िया, हरबर्ट स्ट्रोप, 1968, पृ0 8
[viii] गोस्वामी तुलसीदास, रामचंद्र भाुक्ल, 1963, पृ0 154
[ix] आधुनिक युग में धर्म, सर्वपल्ली राधाकृश्ण, 1968, पृ0 70
[x] कला, सौंदर्य और जीवन, प्रो0 रणवीर सक्सेना, 1967, पृ0 371
[xi] वही, पृ0 383
[xii] चंबा–अचंभा, डी0एस0 देवल, 2012, पृ0 133
[xiii] वही, पृ0 181
[xiv] तुलसी रसायन, डॉ0 भागीरथ मिश्र, 1977, पृ0 112
[xv] हिमाचल प्रदे ा : लोक संस्कृति और साहित्य, डॉ0 गौतम भार्मा व्यथित, पृ0 168
[xvi] वही, पृ0 169
[xvii] हिमाचल प्रदे ा विस्तृत अध्ययन, वीरेन्द्र सिंह, 2008, पृ0 75
[xviii] गद्दी, अमर सिंह रणपतिया, 2010, हिमाचल कला संस्कृति भाशा अकादमी, पृ0 67
[xix] वही, पृ0 116
[xx] वही, पृ0 117
[xxi] रामचरितमानस, 1, भलोक 5
[xxii] वही, 7, 23, 3
[xxiii] वही, 3, 5ख
[xxiv] चंबा–अचंभा, पृ0 259
[xxv] Chamba Achamba (Women's Oral Culture Himachal Pradesh) edited by Prof. Malashri Lal, Dr. Sukrita Paul Kumar, Sahitya Akademy, New Delhi (Collected sons by Priya Sharma), Page-120

----------00--------